ISSN: 2456-947X, Vol. I, Issue. III, Dec-2017

अनघ

(An International Journal of Hindi Language, Literature and Culture)

Journal Homepage: http://cphfs.in/research.php

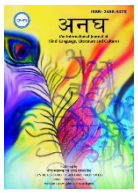

निर्मल वर्मा का गद्य: ध्वंस के बीच अर्थ की तलाश

प्रो. गंगा प्रसाद विमल

सेवानिवृत्त प्रोफेसर,

भारतीय भाषा केंद्र,

भाषा साहित्य और संस्कृति अध्ययन संस्थान,

जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

अतीत एक आँधी की तरह है जिसे हम लौटा नहीं सकते। "कोई हवा पर काबू नहीं पा सकता", बड शलबर्ग ने टिप्पणी की, "हम उसे समझ सकते हैं। हम उसे भले ही अब अपनी तरह न ढाल सकें।" निर्मल वर्मा के निबंध ठीक उसी तरह अपने अतीत, समाज, कला, साहित्य और मनुष्य के महत्त्व को समझने की दिशा में एक लेखक की गंभीर, सुविचारित टिप्पणियाँ हैं। लेकिन वे सिर्फ टिप्पणियाँ ही नहीं हैं, बल्कि कहा जाना चाहिए कि वे एक लेखक की चिंताएँ हैं। उनमें हताशा, क्षोभ और पश्चाताप सब कुछ विद्यमान है, क्योंकि बीते हुए अतीत को या लिखे गये रचनाकर्म को अब बदला नहीं जा सकता है। शायद उससे कुछ सीखा जा सकता। यही चिंता 'वह' मूलाधार है, जो किसी लेखक को वह लिखने के लिए विवश करती है, जो लिखा जाना चाहिए।

कहना होगा निर्मल वर्मा के निबंध एक नये सिरे से 'गद्य की जरूरत' पर विचार करने के लिए उकसाते हैं, क्योंकि इन वर्षों में हिंदी गद्य जिस ढंग से प्रदूषित हुआ है, उसका प्रभाव साहित्य की सभी विधाओं पर पड़ा हैं। गद्यकारों ने यद्यपि संख्या की दृष्टि से जितना गद्य लिखा है, उसके आंकड़े जुटाने काफी मुश्किल हैं, किंतु वह कुछ ऐसा ही अहसास है जैसे कोई कहे कि इस वर्ष हिंदी में इतनी अधिक फिल्में बनी हैं, फूहड़ और अर्थहीन फिल्मों की तरह हिंदी गद्य की स्थिति मात्रा की दृष्टि से तो कम नहीं है, किंतु उस गद्य ने एक अच्छे, सार्थक, प्रासंगिक गद्य का खात्मा किया है। यह कहना कि गद्य की वह परंपरा, जिसके साथ पंडित हजारी प्रसाद द्विवेदी, अज्ञेय, धर्मवीर भारती, श्रीराम वर्मा, रघुवीर सहाय, कुबेरनाथ राय जुड़े हैं, विकसित नहीं हुई है, एक दूसरे ही किस्म की अपेक्षा होगी, क्योंकि ललित गद्य भी धीरे-धीरे एकेडेमिक किस्म के गद्य की ही शक्ल ले लेता है, जिसे निर्मल वर्मा 'गद्य भाषा के खुलेपन' की अपेक्षा से बाँधते हैं, उसका रिश्ता सीधे हमारे समाज से है। इसलिए 'गद्य' की अतिरिक्त रूप से सजाना-सँवारना उस अपेक्षित गद्यकर्म का हिस्सा नहीं है, जो हमारी सामाजिक जरूरत से बाहर आता है।

"अकाल, भूकंप और युद्ध की भयानकता को हम नंगी आँख से देख सकते हैं, किंतु भाषा किस खामोशी और कितने अदृश्य ढंग से ध्वस्त हो जाती है, इस ओर बहुत कम लोगों का ध्यान जाता है।" निर्मल वर्मा की यह छोटी-सी टिप्पणी इस तथ्य की ओर इशारा करती है कि भाषा का, जो रूप ध्वस्त होता है, उसके सामाजिक कारण है और उन सामाजिक कारणों को जानने पहचानने, उनकी एक गंभीर छानबीन की फुरसत जैसे हिंदी गद्यकारों को नहीं है।

यद्यपि गद्य के साहसिकता भरे, ललकार भरे उदाहरण मिल जायेंगे, किंतु एक भाषा अपनी संस्कृति और राजनीतिक स्थिति को जिस बेबाकी, अर्थमयता से स्पष्ट कर सकती है, वह जैसे हमारे तमाम साहसिक कारनामों के बीच भी अनुपस्थित है।

बिंबधर्मी गद्य

निर्मल वर्मा का गद्य उनकी कहानियों की तरह एक खास किस्म का बिंबधर्मी गद्य है। उनके प्रिय बिंब अकसर कहानियों और निबंधों में एक जैसे लगते हैं, किंतु अर्थ की दृष्टि से कहानियों में वे बिंब एक दूसरी ही किस्म की प्रयोजनीयता से बँधे हैं और निबंधों में वे खास किस्म के 'पैंशन' को व्यक्त करते हैं। लेकिन अधिकांशतः अपनी अर्थ की अंतर्धाराओं में निर्मल के निबंध एक लेखक के 'विवेक' के निबंध है। निर्मल ने स्वयं शब्द और स्मृति के निबंधों की भूमिका में स्पष्ट किया है कि इन निबंधों का "उद्देश्य दूसरों के सामने कुछ प्रमाणित करना उतना नहीं है, जितना खुद अपने कुछ पुराने विश्वासों के आसपास चक्कर काटना है।"

'शब्द और स्मृति' में निर्मल के निबंधों का विषय ज्यादातर भारत, भारतीय साहित्य और भारतीय मनीषा के बारे में है (यदि 'मैं कहीं भटक गया हूँ' तथा 'लंदन में बोर्गेस' छोड़ दिया जाए, तो सारे निबंधों की मूल चिंता का केन्द्र भारत है) और जाने-अनजाने भारत के लेखक-आलोचकों का एक वर्ग निर्मल के बारे में जो आरोप लगाते सुना जाता है, वह यही है कि निर्मल की रचना का विषय 'यूरोप' है। जबकि उन निबंधों, कथाओं को पढ़ने पर सहज ही वे उन लेखकों से भारत और भारत के समाज के बारे में ज्यादा सजग प्रतीत होते हैं। यह कहने भर का अर्थ केवल इतना स्पष्ट करना है कि लेखक के तौर पर किस भारत के बारे में एक लेखक को सजग रहना है ? निर्मल का स्वयं कथन प्रमाण के रूप में लें -- "एक देश को सामाजिक व्यवस्था उसके शासन-तंत्र से कहीं अधिक व्यापक होती है। मैं यहाँ इतना और जोड़ना चाहूँगा कि वह काल की दृष्टि से अधिक स्थायी होती है -- और ये उसके कुछ ऐसे तत्व होते हैं, जिन्हें इतिहास की धारा बहुत कम छू पाती है।" परंतु इतनी पंक्तियाँ एक भ्रम उपजाती हैं, मसलन काल की दृष्टि से अधिक स्थायी होना या इतिहास की धारा द्वारा बहुत कम छुआ जाना, जैसी धारणाएँ तब तक एक प्रकार के 'अंतर्विरोधात्मक' कथन कही जायेंगी, जब तक हम निर्मल का पूरा निबंध न पढ़ लें। अपने इस निबंध 'लेखक और समाज-व्यवस्था' में निर्मल ने इन धारणाओं को लेखक के संदर्भ में स्पष्ट करते हुए 'एलीट संस्कृति' के उदय से जोड़ते हुए उनके 'अनैतिक एवं पथभ्रष्ट' चरित्र में उस 'रोग' की उपस्थिति देखी है, जिसके कारण हम अपने सामाजिक जीवन की असलियत नहीं पहचान पाते।

'भारत' के बारे में निर्मल ने उन्नीसवीं सदी के भारत के बारे में जो विचार दिए हैं, वे एक तरह से अंग्रेजों या खुद पराजित जाति के रूप में भारतीयों के विचार से अलग है और वे एक ऐसे आधार की खोज करते हैं, जिससे हम अपने अतीत, मिथक और प्रतीकों के सही अर्थ खोज सकें।

कुला मिलाकर निर्मल के निबंध गद्य भाषा द्वारा अर्थ की खोज के निबंध कहे जा सकते हैं। निर्मल के 'शब्द और स्मृति' के निबंधों में स्वयं हर निबंध का विषय ठीक एक धारणा के अर्थ की खोज से जुड़ा है। खासकर 'संप्रेषण का संकट' या 'गद्य का पतन' या 'अतीत: एक आत्म-मंथन' जैसे निबंध संस्कृति और उसके अर्थ से जूझते निबंध हैं।

जीवंत बहस का चमत्कार

'दूसरी दुनिया' में 'अतीतः एक आत्म-मंथन', 'संप्रेषण का संकट' और 'सृजन में सौंदर्य और नैकिता', ये तीन पुराने निबंध और कुछ पहले संकलित कहानियाँ जैसे 'अंधेरे में', 'माया दर्पण', 'पिछली गर्मियों में', 'जलती झाड़ी' या 'बीच बहस में' संकलित की गई है। इसी तरह 'यात्रा संस्मरण' या 'साक्षात्कार' भी पुरानी रचनाएँ हैं। इन्हें संकलित करते हुए निर्मल ने अनेक बातें कही हैं परंतु एक महत्त्वपूर्ण आत्मस्वीकृति यह है कि "मेरे लिए लिखना इस पीड़ा को अपना 'हिस्सा बनाने' की कोशिश रही है। इससे एक अजीब कृतज्ञता का अहसास होता है। यदि कोई अचानक मुझसे पूछ बैठे कि इन वर्षों के दौरान मैंने लिखने से क्या पाया है, तो मेरा उत्तर बिल्कुल असंदिग्ध होगा -- उसके द्वारा मैंने एक ऋण चुकाया है। इस धरती पर जन्म लेने का चमत्कार, जो केवल एक दूसरे चमत्कार को जन्म देने से ही चुकाया जा सकता है।" इसमें संदेह नहीं है कि निर्मल का गद्य एक किस्म का चमत्कार ही है। हिंदी में वह अपनी अलग किस्म की पहचानवाला गद्य है -- बल्कि एक लेखक के लेखकीय दायित्व को स्थापित करनेवाला गद्य। उसमें चमत्कार केवल भाषा या गद्य के इस अलग किस्म के होने का नहीं है, बल्कि बहुत-से विषयों से, जिनसे लेखक भागते हैं, उनके बीच एक जीवंत बहस में हिस्सा लेने का चमत्कार निर्मल वर्मा पैदा करते हैं। आज जब गद्य निहायत सपाट, एक हद तक 'रोजनामचा' भरने जैसी क्रियात्मकता से परिपूर्ण लगता है, गद्य में अर्थ के काव्यमय प्रयोग का यह गद्य चुनौती भरा भी लगता है।

निर्मल के निबंधों का रूप बहुत कुछ 'क्लासिकी' किस्म का रूप है, किंतु वह केवल 'रूपवाद' का क्लासिकी रूपांतरण नहीं है, बल्कि अपने हर निबंध में निर्मल मनुष्य, स्वतंत्रता और उसकी नियति पर चिंता प्रकट करते हैं। अंततः मनुष्य ही वह सत्ता है, जिसका अवमूल्यन या जिसके विनाश की कोई भी कोशिश किसी सजग विचारक को विचलित करती है। कहना चाहिए कि ''निर्मल के निबंधों का विषय' और 'निर्मल क्या चाहते हैं', की सीमा आदमी पर जाकर खत्म हो जाती है। एक बड़बोले लेखन की अपेक्षा, जो हमने इन वर्षों में उत्पादित किया है, एक सन्नाटेभरे चुप के भीतर तिलमिलाने की कोशिश शायद ज्यादा प्रासंगिक है। अतः कृष्णा सोबती की यह अपेक्षा -- ''सोचा निर्मल से यह तो कहते जाए कि प्यारे दोस्त, शाम भले ही कंसर्ट पर जाओ, बीथोदिन सुनो या रविशंकर अली अकबर खां, मगर तुम्हारी गली में थुथनी उठाये सूअर घूम रहे हैं उन्हें भी तो देखो, कुछ गौर करो, तुम्हारी लाजवाब कलम से कोई यथार्थ तो उभरे।... ये निबंध पूरी करते हैं -- एक अलग ही ढंग से, कि जिस मूल्क को हमने सूअरों का बाड़ा बना दिया है, उसके कारण हैं और इस आत्म-पराजय के लिए हम खुद जिम्मेदार हैं। कहना चाहिए कि यथार्थ के बारे में हमारे अब तक के स्थूल किस्म के नजरिए की जगह निर्मल ने 'यथार्थ' के मूलाधारों को विषय बनाया है। निर्मल असल मंे मनुष्य को इस जिम्मेदारी से परिचित कराने का काम निबंधों में कर रहे हैं।